अभिव्यंजना सिद्धांत

क्रोचे का अभिव्यंजना सिद्धांत सहजानुभूति-अभिव्यंजना पर आधारित है, जो उनके अनुसार चेतना की सबसे महत्त्वपूर्ण क्रिया है। क्रोचे का मत है कि सहजानुभूति (Intution) से ही व्यक्ति को यथार्थ का ज्ञान होता है। कलाकार जगत में जो कुछ देखता है, उसके यथार्थ का बोध उसके मन में सहजानुभूति के रूप में उभरता है जो एक अमूर्त प्रतीति-सी होती है। यह प्रतीति अपने-आपमें स्वतंत्र क्रिया है और यह बौद्धिक अथवा तर्कसिद्ध ज्ञान पर निर्भर नहीं होती। यह इंद्रियगत संवेदन

से भी भिन्न होती है क्योंकि संवेदन में चेतना सर्जनात्मक रूप से सक्रिय नहीं होती। वह पूर्णतः बाह्य-वस्तु या उद्दीपक का प्रभाव भर होता है जिसे मन निष्क्रिय रूप से ग्रहण करता है। मात्र संवेदन से किसी वस्तु का समग्र बोध नहीं होता। बोध केवल चेतना के प्रकाश में ही संभव है। सहजानुभूति में चेतना प्राणवंत रूप से सक्रिय होती है। बाह्य प्रभावों को यह निष्क्रिय रूप से एक छाप के तौर पर ग्रहण नहीं करती। बाह्य जगत की वस्तुओं के रूप, रंग, रेखाओं आदि का बोध तथा विश्लेषण भी इसमें नहीं होता क्योंकि ऐसे बोध तथा विश्लेषण को बुद्धि तथा तर्क की अपेक्षा होती है। सहजानुभूति चूँकि चेतना में यथार्थ की प्रतीति के रूप में उभरती है और चेतना ही अंतिम तथा शाश्वत सत्य है, अतः वस्तु जगत का रूप-रंग-रेखामय तथ्य इसके आगे गौण है।

क्रोचे के मत में यह सहजानुभूति ही 'अभिव्यंजना' (expression) है। यहाँ यह स्पष्ट होना चाहिए कि 'अभिव्यंजना' शब्द का प्रयोग क्रोचे 'बाह्य अभिव्यक्ति' वाले सामान्य अर्थ में नहीं करते। यह शब्द, रंग, रेखा, आकार या ध्वनि के माध्यम से बाह्य जगत में व्यक्त नहीं होती वरन् मानस के स्तर पर होनेवाली सहजानुभूति से अभिन्न है। सहजानुभूति ज्ञान ही अभिव्यंजनात्मक ज्ञान है और मानस के अंदर सहजानुभूत प्रभावों की अभिव्यंजना ही कला है। कला की स्थिति भी क्रोचे बाह्य जगत के रूप, रंग, आकारों में नहीं, वरन् कलाकार के मानस में मानते हैं। यह भी सौंदर्यात्मक अभिव्यक्ति की तरह पूर्णतः आंतरिक होती है और बाह्य स्तर पर इसका संप्रेषण कतई आवश्यक नहीं है। कला तभी पूर्ण हो जाती है जब हम अपनी सहजानुभूति को अपने मानस में ही बिंब-निर्माण के माध्यम से कविता, चित्र या मूर्ति के रूप में अभिव्यंजित करते हैं। कलाकार यदि अपनी सहजानुभूति को बाह्य स्तर पर काव्य, चित्र या मूर्ति के रूप में अभिव्यक्त करता भी है तो वह एक अतिरिक्त और व्यावहारिक क्रिया है जिसके बिना भी कला के कला होने में कोई बाधा नहीं है। सहजानुभूति-अभिव्यंजना-कला को बाह्य स्तर की इस व्यावहारिक क्रिया से जोड़ना गलत है। हालाँकि दोनों साथ-साथ आ सकते हैं, किंतु यह संग अनिवार्य नहीं है।

ध्यान देने योग्य बात यह है कि कला भी बाह्य स्तर पर तभी व्यक्त होकर संप्रेषित हो सकती है जब पहले वह सहजानुभूति-अभिव्यंजना के रूप में मानसिक स्तर पर उभरे।

सहजानुभूति जहाँ बाह्य स्तर पर काव्य, चित्र, मूर्ति आदि के रूप में अभिव्यक्त होती है, वहीं कलाकार की स्वतंत्रता समाप्त होने लगती है। सामाजिक नैतिकता तथा उपयोगिता के नियम उस पर लागू होने लगते हैं। सहजानुभूति तब सौंदर्य-सृजन की प्रक्रिया का हिस्सा नहीं रहती, वरन् एक उपयोगी वस्तु के रूप में समाज के सदस्यों को आनंद प्रदान करती है, उनका नैतिक परिष्कार करती है और मन

के स्तर पर पुनःसृजन के लिए उन सुंदर अनुभूतियों को भौतिक रूप में संरक्षित करके स्मृति की सहायक तथा उद्दीपक भूमिका ग्रहण करती है। किंतु सौंदर्य-सृजन में यह फिर भी एक गौण–बल्कि अतिरिक्त क्रिया ही रहती है।

क्रोचे कला की सृजन-प्रक्रिया के चार चरणों को स्वीकार करते हैं जिनमें प्रथम तीन चरण अनिवार्य हैं और चौथा चरण वैकल्पिक।

प्रथम चरण में कलाकार किसी उद्दीपन के प्रभावों के अंतर्गत एक अमूर्त संवेदना का अनुभव करता है।

दूसरे चरण में कल्पना शक्ति के माध्यम से वह उन प्रभावों का संश्लेषण तथा अन्वय करता है।

तीसरे चरण में बिंब-विधान के माध्यम से मानस स्तर पर अभिव्यंजना पूर्ण हो जाती है और उसी स्तर पर कलाकृति भी शब्द, रंग, रेखा, आकार या स्वर की परिकल्पना के रूप में पूर्ण होकर प्रगीतात्मक सहजानुभूति (Lyrical intution) या तन्मय आनंदानुभूति को जन्म देती है।

चौथा और वैकल्पिक चरण है इस मानस अभिव्यंजना का भौतिक स्तर पर काव्य, चित्र, संगीत, मूर्ति आदि के रूप में अवतारण।

इस संदर्भ में आगे चलकर क्रोचे ने बोध (Feeling) को भी बहुत महत्त्व दिया है। समय-समय पर इस शब्द के कई अर्थों पर विचार करते हुए क्रोचे अंततः जिस अर्थ को ग्रहण करते हैं, वह है 'विशुद्ध सहजानुभूति' (Pure intution) जो गैर अवधारणात्मक तथा गैर ऐतिहासिक होती है। वह न वैज्ञानिक होती है, न तथ्यपरक। बोध मानस पर बिंबों में रूपांतरित होता है और अनेक बिंबों के संश्लेषण के माध्यम से यह बोध मात्र अथवा बिंब मात्र से कहीं आगे बढ़कर 'प्रगीतात्मक सहजानुभूति' (Lyrical intution) में बदल जाता है। इस बोध को क्रोचे ने कला की अंतर्वस्तु के लिए आवश्यक माना है; किंतु यह भी समस्त इतिहास और यथार्थ या अयथार्थ के संदर्भों से मुक्त और पूर्णतः भावपरक (ideal) होता है। इन्हीं बातों को ध्यान में रखते हुए विमसाट तथा ब्रुक्स ने क्रोचे के सिद्धांत को कला के समस्त आधुनिक सिद्धांतों में एक प्रकार से सबसे अधिक 'संज्ञानात्मक' (cognitive) कहा है।[1]